International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 368-370

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 368-370
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 10-10-2020
Accepted: 12-11-2020

श्रुति
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
श्रुति
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत

अर्वाचीन वैयाकरणों में "मौनिश्रीकृष्णभट्ट"

श्रुति

प्रस्तावना

भारतीय विचार-सरणि में शब्दशास्त्र का सर्वाधिक महत्त्व है। भाषा का उद्गम स्थान शब्द ही है। यदि शब्द-ज्योति से यह संसार आलोकित न होता तो त्रैलोक्य में अंधकार व्याप्त हो जाता–

> इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
> यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते[1]॥

शब्द–संहिता के रूप में सर्वप्रथम वैदिक–वाङ्मय के प्रकट होने से व्याकरण वेद का अंग माना गया है। वैदिक मन्त्रों में पदों की व्युत्पत्तियाँ उपलब्ध होती हैं, जो व्याकरण की वेदमूलकता को पुष्ट करती हैं। इस संदर्भ में महर्षि पतञ्जलि ही प्रमाणभूत आचार्य हैं। उन्होंने महाभाष्य के पस्पशाह्निक में पाँच ऋचाओं को उद्धृत कर व्याकरण शास्त्र के प्रयोजनों को संकेतित किया है।

छः वेदांगों[2] में व्याकरण सर्वप्रधान है, व्याकरण को वेद के मुख[3] का स्थान दिया गया है। छः अंगों में से शिक्षा और निरुक्त में उल्लिखित अनेक बातें विशुद्ध रूप से वर्तमान काल के प्रचलित व्याकरण के क्षेत्र में आती है। इस तरह शिक्षा व निरुक्त व्याकरण के पूरक अंग हैं।

व्याकरण परम्परा

भारत में व्याकरण शास्त्र की एक सुदीर्घ परम्परा प्राप्त होती है। पाणिनि से पूर्व आपिशलि, गार्ग्य, गालव, काश्यप, स्फोटायन, शाकटायन, शाकल्य आदि लगभग 50 आचार्यों का उल्लेख मिलता है। पाणिनि से पूर्व ही व्याकरण शास्त्र की दो धाराएँ प्रवाहित हो चुकी थीं–

1. प्रातिशाख्य परम्परा: वैदिक साहित्य की विभिन्न शाखाओं से सम्बद्ध शब्दों का अन्वाख्यान प्रातिशाख्यों में मिलता है। इस परम्परा में भाषा, वाक्य एवं ध्वनि विवेचन मुख्य रूप से होता था।

2. व्याकरण परम्परा: इसमें वैदिक एवं लौकिक अर्थात् समसामयिक भाषा को विशेषरूप से विवेचन का विषय बनाया गया था। यदा–कदा भाषा संबन्धी नियमों का निर्धारण भी इस परम्परा के द्वारा किया जाता था।

आचार्य पाणिनि ने ऐसे व्याकरण की रचना की जिसने समकालिक तथा भविष्य में प्रयोग की जाने वाली संस्कृत भाषा का मार्गदर्शन किया, जिसके फलस्वरूप पाणिनीय व्याकरण ही संस्कृत व्याकरण का पर्यायवाची बन गया। आचार्य कात्यायन ने पाणिनि के सूत्रों के साथ समानान्तर रूप में वार्तिकों को विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया। सूत्र और वार्तिकों के समन्वयात्मक दृष्टिकोण ने व्याकरणशास्त्र को अधिक व्यापक बना दिया। महर्षि पतञ्जलि का महाभाष्य वस्तुतः अष्टाध्यायी पर आधारित रहा। त्रिमुनि (पाणिनि–कात्यायन–पतञ्जलि) के पश्चात् पाणिनि शाखा के वैयाकरणों को दो कोटियों में रखा जा सकता है–

1. अष्टाध्यायी परम्परा: जिन्होंने पाणिनि की अष्टाध्यायी को उपजीव्य मानकर उनके सूत्र क्रमानुसार व्याख्याएँ की। इस परम्परा के प्रमुख आचार्य वामन, जयादित्य, जिनेन्द्रबुद्धि एवं हरदत्त रहे।

2. प्रक्रियानुसारी परम्परा: जिन्होंने अष्टाध्यायी को उपजीव्य मानते हुए भी शिक्षण की सुविधा के विचार से (भाषा के व्यावहारिकता के विचार से) प्रकरणों में वर्गीकृत कर प्रक्रिया की दृष्टि से सूत्र क्रम में अपेक्षित परिवर्तन किया। सुप्रसिद्ध विद्वान् धर्मकीर्ति (12वीं शताब्दी) ने 'रूपावतार' लिखकर इस परम्परा की पहल की। तत्पश्चात् विमल सरस्वती तथा रामचन्द्राचार्य का नाम उल्लेखनीय है। भट्टोजी दीक्षित की 'सिद्धान्त–कौमुदी' के प्रकाशन ने अष्टाध्यायी की समग्रता को निखार दिया। सिद्धान्त कौमुदी की प्रचलित व्याख्याएँ 'तत्वबोधिनी' तथा 'बालमनोरमा' हैं।

व्याकरण शास्त्र के विकास को देखते हुए यह अनुमान होता है कि 16वीं शती से 18वीं शती का समय सूत्रानुसारी एवं प्रक्रियानुसारी व्याख्याओं तथा उन पर लिखी गई टीकाओं का संक्रमण काल रहा।

भट्टोजी दीक्षित की रचनाओं के अनन्तर व्याकरण शास्त्र में वैचारिक परिवर्तन हुआ। यह विवेचन पद पदार्थ पर अधिकतर आधारित था। अतः शैली की नवीनता ने व्याकरण को नव्य–न्याय या तार्किकता के साथ समन्वित कर दिया। शब्दशक्ति का विचार बौद्ध दर्शन के अपोह सिद्धान्त की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ है। उसकी चरम परिणति नव्य न्याय के रूप में हुई। इसके समानान्तर शब्द और अर्थ का यह विषय काव्यशास्त्रीय अनुशीलन के रूप में मीमांसा पद्धति पर किया गया। इस शैली का श्रीगणेश नागेशभट्ट ने किया। इन्होंने एक दर्जन स्वतंत्र और टीका ग्रन्थों की रचना की। इनमें 'लघुशब्देन्दुशेखर' (सिद्धान्त कौमुदी की टीका), 'वैयाकरण–सिद्धान्तमञ्जूषा', 'परिभाषेन्दुशेखर' तथा 'प्रदीप विवरण' बहुत प्रसिद्ध हैं। नागेशभट्ट के उत्तरवर्ती वैयाकरणों में मौनि वंश के कृष्णभट्ट महान् वैयाकरण हुए। विभक्त्यर्थनिर्णय में मंगलाचरण के उपरान्त मौनिश्रीकृष्णभट्ट को न्याय–व्याकरण–मीमांसा का ज्ञाता कहा गया है–

> तर्कव्याकृतिमीमांसा परिशीलनशालिना।
> मौनिश्रीकृष्णभट्टेन विभक्त्यर्थो विरच्यते[4]॥

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

मौनिश्रीकृष्णभट्ट के विषय में उनके ग्रन्थों से ही अधिकांशतः जानकारी प्राप्त होती है। अभ्यंकर कोष में कहा गया है कि मौनि जयकृष्ण 17वीं शती में वाराणसी में रहते थे[5]।

वादार्थसंग्रह के आदि में महादेव शर्मा ने कहा है कि मौनिश्रीकृष्णभट्ट के पितामह गोवर्द्धनभट्ट तथा पिता रघुनाथभट्ट थे– "श्रीकृष्णभट्ट पितामहो गोवर्द्धनभट्टः तर्कभाषाटीकाया न्यायबोधिन्याश्च प्रणेता"।

विभक्त्यर्थनिर्णय के अन्त में लिखित निम्न वाक्य से भी इनके पितामह गोवर्द्धनभट्ट तथा पिता रघुनाथभट्ट होने की पुष्टि होती है– "श्रीमन्मोनिकुलतिलकायमानगोवर्द्धनभद्रात्मजरघुनाथभट्टसुत श्रीकृष्ण[6] इति"।

स्फोटचन्द्रिका में इनकी माता जानकी तथा पिता रघुनाथभट्ट उल्लिखित हैं–

> पित्रोः पादयुगं नत्वा जानकीरघुनाथयोः।
> मौनिश्रीकृष्णभट्टेन तन्यते स्फोटचन्द्रिका॥

जयकृष्णकृत स्वर वैदिकीटीका सुबोधिनी से ज्ञात होता है कि रघुनाथभट्ट के चार पुत्र थे–

> बभूवुस्तस्य चत्वारस्तनयाः सुनया बुधाः।
> महादेवाभिधः श्रेष्ठो महाभाष्यसुभाषितः॥
> रामकृष्णो द्वितीयोऽसौ रामकृष्णाङ्घ्रिसेवकः।
> तृतीय जयकृष्णोऽस्मि श्रीकृष्णो यदनुद्भवः॥

यहाँ पर चतुर्थ पुत्र के नामोल्लेख न होने से भी मौनिश्रीकृष्णभट्ट ही चतुर्थ पुत्र है यह अनुमान किया गया है।

विद्वानों ने मौनिश्रीकृष्णभट्ट का काल 1700 ख्रीस्ताब्द माना है[7]। विभक्त्यर्थनिर्णय में शब्देन्दुशखर व मञ्जूषा का नामोल्लेख होने से ये शेखरकार व नागेशभट्ट के अर्वाचीन सिद्ध होते हैं।

मौनीश्रीकृष्णभट्ट ने व्याकरण दर्शन की अनेक कृतियों की रचना की हैं। जिनमें प्रमुख हैं– 1. स्फोटचन्द्रिका 2. वृत्तिदीपिका 3. आख्यातवाद 4. शब्दार्थतर्कामृत 5. तर्कचन्द्रिका 6. विभक्त्यर्थनिर्णय।

वैयाकरणों के स्फोटसिद्धान्त के विवरण के लिए मौनिश्रीकृष्णभट्ट ने स्फोटचन्द्रिका की रचना की। यह कृति 1899 ईस्वीय वर्ष में शब्दकौस्तुभ के परिशिष्ट में प्रकाशित हुई। पुनश्च इसका संस्करण महादेव शर्मा द्वारा मुम्बई के गुजराती मुद्रणालय से 1913 में प्रकाशित किया गया। अभ्यंकर के व्याकरण कोषानुसार स्फोटसिद्धान्त का यह लघुकाय ग्रन्थ है। इसी को आधार बनाकर श्री कृष्णशास्त्री आरडे ने "स्फोट चटक" नामक लघु पुस्तिका में वैज्ञानिक दृष्टि को अपनाते हुए स्फोट के संदर्भ ध्वनि की नित्यता पर विचार किया है[8]।

वृत्तिदीपिका का प्रकाशन 1930 में प्रिन्सेस आफ वेल्स सरस्वती भवन ग्रन्थमाला के उनतीसवें ग्रन्थ के रूप में हुआ। इस संस्करण के संपादक महाशय गंगाधर शास्त्री हैं। पुनः इस ग्रन्थ का प्रकाशन राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला जोधपुर से 1956 में प्रकाशित हुई। जैसा कि नाम से ही प्रतीति होती है कि इसमें अभिधादि तीन वृत्तियों का प्रतिपादन हुआ है। ग्रन्थकार ने न केवल साहित्यशास्त्र में प्रसिद्ध तीन वृत्तियों की विवक्षा की है, अपितु वैयाकरणों द्वारा अभिमत "कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्चवृत्तयः" ये पाँच वृत्तियाँ भी संगृहीत की हैं। स्फोटादि विचार भी उपसंहार में संक्षेप में प्राप्त होता है।

मौनिश्रीकृष्णभट्ट ने आख्यातवाद की रचना भी की है। मौनिश्रीकृष्णभट्ट ने विभक्त्यर्थनिर्णय में "विस्तरस्तु अस्मत्कृताख्यातवादे द्रष्टव्यः"[9] उल्लेख किया है।

शब्दार्थतर्कामृत ग्रन्थ का प्रकाशन राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान गंगानाथ झा परिसर की "Journal of The Ganganath Jha Kendriya Sanskrit Vidyapeeth LXIII (1-4) Jan-Dec 2007" शोधपत्रिका में हुआ है। इस ग्रन्थ का सम्पादन ललित कुमार त्रिपाठी ने किया है।

तर्कचन्द्रिका का सम्पादन भी राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान गंगानाथ झा परिसर की शोधपत्रिका में ललित कुमार त्रिपाठी ने किया है।

विभक्त्यर्थनिर्णय[10] का प्रकाशन लघुविभक्त्यर्थनिर्णय[11] के नाम से मुम्बई के गुजराती मुद्रणालय से 1915 में महादेव शर्मा द्वारा किया गया है। मौनिश्रीकृष्णभट्ट ने इस ग्रन्थ में नागेशभट्ट के सिद्धान्तों की आलोचना की है तथा विभक्त्यर्थ विषय में नवीन अवधारणा प्रस्तुत की है।

उपसंहार

न्याय–व्याकरण–मीमांसा शास्त्रों पर कृष्णभट्ट का पूर्ण अधिकार था। जिसके फलस्वरूप विभक्त्यर्थनिर्णय में अन्य आचार्यों के मतों की दुरूहता तथा शास्त्रीय गंभीरता को समझाते हुए ग्रन्थ–ग्रन्थि को सफलतापूर्वक सुलझाया है। इनका शब्दबोध विमर्श अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मौनिश्रीकृष्णभट्ट एक अच्छे वैयाकरण थे। उनका हृदय व्याकरण–दर्शन की ओर है और मस्तिष्क न्याय–दर्शन की ओर।

सन्दर्भ

1. दण्डी, काव्यादर्श
2. शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष
3. छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
4. ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
5. शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
6. तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥ पाणिनीय शिक्षा, श्लोक ४१–४२
7. विभक्त्यर्थनिर्णय, पृष्ठ–१
8. A Dictionary of Sanskrit Grammar By Mahamahopadhyaya Kashinath Vasudev Abhyankar, page no. 147
9. विभक्त्यर्थनिर्णय, पुष्पिका
10. A Dictionary of Sanskrit Grammar By Mahamahopadhyaya Kashinath Vasudev Abhyankar, page no. 147
11. संस्कृत साहित्य का बृहद् इतिहास, पंचदश खण्ड, पृष्ठ–३४५
12. विभक्त्यर्थनिर्णय,पृ–२५
13. विभक्त्यर्थनिर्णय as mentioned in Aufrechts Catalogus catalogorum
14. वादार्थसंग्रहः तृतीयो भागः, सम्पा. वाक्रे इत्युपाह्वो गङ्गाधरभट्टसुतमहादेवशर्मा, गुजराती मुद्रणालयः